श्री गुरु की सिखावनियों को आत्मसात् करना

स्वामी अपूर्वानन्द द्वारा लिखित

आत्मसात्करण पर एक व्याख्या

विद्यार्थी होने के नाते, हम सिद्धयोग की सिखावनियों को अपने जीवन में आत्मसात् करते हैं, उन्हें पूरी तरह समझकर अपने अन्दर उतारने और पूरी तरह उन्हें अंगीकार करने के प्रयत्न द्वारा।

हो सकता है आप सोचें कि यहाँ 'पूरी तरह' का क्या अर्थ है? कल्पना कीजिए, एक गिलास पानी में नीली स्याही की एक बूँद गिरती है। आरम्भ में, स्याही अलग दिखाई देती है, रंगहीन एवं पूर्णतया पारदर्शी पानी में एक तैरते हुए धुएँ के गुब्बार की तरह। अन्त में पानी समान रूप से रँग जाता है, वह हल्के नीले रंग का हो जाता है। और इस स्तर पर स्याही पूरी तरह पानी में आत्मसात् हो चुकी होती है।
साधना में सिखावनियों को आत्मसात् करने का प्रयास परम आवश्यक है।

श्री गुरुमाई कहती हैं,

> साधक के लिए सबसे अनिवार्य बात है, सिखावनियों को आत्मसात् करना। इसे तुम्हारे लिए कोई और नहीं कर सकता। *तुम्हें* सिखावनियों को आत्मसात् करना है। इसीलिए जब भी बाबा मुक्तानन्द ने सिखावनियाँ दीं, उन्होंने सदा अन्य किसी भी बात से अधिक एक बात पर ज़ोर दिया। वे कहते : "आत्मसात् करो। अपने हृदय में उतारो।"

आत्मसात् करना, सिद्धयोग विद्यार्थित्व के चार प्रमुख तत्त्वों में से एक है; वे चार तत्त्व हैं — अध्ययन करना, अभ्यास करना, आत्मसात् करना और परिपालन करना। ये चारों तत्त्व एक-दूसरे से पूरी तरह सम्बन्धित हैं। हर एक तत्त्व अन्य सभी तत्त्वों को आधार देता है। और श्री गुरु की सिखावनियों को हृदय में उतारने में एक विशिष्ट तथा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

कोई चीज़ आत्मसात् होने का एक तरीक़ा है, जब हम कोई कार्य करने के बाद कुछ देर के लिए शान्त होकर मनन करते हैं यानी किसी अध्ययन और अभ्यास के बाद होने वाला चिन्तन। उदाहरण के लिए, हठयोग सत्र के अन्त में हम परम्परागत रूप से पीठ के बल लेटकर शवासन में विश्राम करते हैं। इस आसन की प्रशान्ति में हम, सूक्ष्म व गहरे स्तर पर अपने सक्रियता से किए गए सत्र के लाभों को आत्मसात् करते हैं। बिल्कुल इसी प्रकार, हम सक्रियता से किए गए किसी अध्ययन सत्र के पश्चात् मनन-चिन्तन के लिए समय निकालते हैं।

आत्मसात् करने के लिए, विद्यार्थित्व के अन्य तीन तत्त्वों — अध्ययन, अभ्यास और परिपालन के साथ नियमित रूप से जुड़े रहना आवश्यक है। सिखावनियों को आत्मसात् करने की प्रक्रिया समय के साथ होती है — उदाहरण के लिए, जब हम सेवा अर्पित कर रहे होते हैं या, जब हम शास्त्रों में से किसी अंश को समझने का प्रयास करते हैं। बार-बार, सिखावनियों की ओर मुड़ने से हमारी समझ गहरी होती है और वे हमारे अन्तर की गहराई में पैठने लगती हैं।

काश्मीर शैवदर्शन के सिद्धान्त पर आधारित, ग्यारहवीं शताब्दी के एक ग्रन्थ, प्रत्यभिज्ञाहृदयम् के सूत्र १५ में आत्मसात्करण के सर्वोच्च स्वरूप के विषय में बताया गया है। सूत्र कहता है :

बललाभे विश्वमात्मसात्करोति॥

बल प्राप्त करने पर साधक ब्रह्माण्ड को अपने में आत्मसात् कर लेता है।

संस्कृत का वाक्यांश, 'आत्मसात्करोति' अर्थात् "आत्मसात् करना" बाबा जी के आग्रहपूर्ण अनुरोध 'आत्मसात् करो', को प्रतिध्वनित करता है। सूत्र सिखाता है कि जब हम अपनी आत्मा की पूर्ण शक्ति प्राप्त कर लेते हैं तब हमें यह अनुभव होता है कि सभी कुछ आत्मा के साथ एकरूप है। हम उस अपरिमित आनन्द में प्रतिष्ठित हो जाते हैं, जो हमारा सच्चा स्वरूप है।

तो हम किसी चीज़ को वास्तव में कैसे 'आत्मसात्' करेंगे? ऐसी गहन स्तर पर और अनवरत रूप से चलने वाली सीखने की प्रक्रिया में दोनों ही आवश्यक हैं — बार-बार प्रयत्न करते रहना और किसी चीज़ को अपने अन्दर ग्रहण कर लेने का संकल्प। और यह बात हमारे आध्यात्मिक उद्यमों के लिए ही नहीं, बल्कि हमारे जीवन के किसी भी क्षेत्र के लिए सच है। खिलाड़ी या नर्तक अपने कला-कौशल का अभ्यास निरन्तर करते रहते हैं। अन्ततः उनके प्रयास उनके अस्तित्व में इतनी गहराई तक समा चुके होते हैं कि जब वे अपने कला-कौशल का प्रदर्शन करते हैं तो दर्शकों को लगता है कि उनकी गतिविधियाँ व

मुद्राएँ बिना किसी प्रयास के हो रही हैं। जब कोई व्यक्ति किसी कार्य में या किसी प्रकार के ज्ञान में पारंगतता हासिल करता है तो उसके अस्तित्व में 'सारूप्य' यानी एकरूपता का भाव व्याप्त हो जाता है। यही 'आत्मसात् करने' का लक्षण है यानी उन्होंने उसे हृदयंगम कर लिया है, उसे इस प्रकार सीख लिया है कि वह उनके हृदय में समा चुका है।

यहाँ, हम बाबा जी के कथन, "अपने हृदय में उतारो" के विषय में अपनी समझ को गहरा कर सकते हैं। अकसर बार-बार दोहराकर सीखने या याद कर लेने से हमारा तात्पर्य होता है, किसी चीज़ को शब्दशः दोहराने की क्षमता द्वारा कण्ठस्थ कर लेना। परन्तु, जैसा कि बाबा जी समझाते हैं "हृदय से सीखने" का अर्थ है, अपने अस्तित्व के गहनतम स्तर तक अपनी समझ को पूरी तरह आत्मसात् करना। एक बार जब हम सिखावनियों को समाहित कर लेते हैं तो वे हमारा अंग बन जाती हैं; वे, स्वयं को तथा विश्व को देखने की हमारी दृष्टि का आधार बन जाती हैं।

आत्मसात् करने के लिए, जो गहन परिपक्वता आवश्यक होती है उसे समझाने के लिए, बाबा मुक्तानन्द अकसर महाभारत की यह कहानी सुनाया करते थे। महान गुरु द्रोणाचार्य, कौरव और पाण्डव राजकुमारों को यह सिखावनी याद करने का निर्देश दे रहे हैं, "सदा सत्य बोलो। कभी क्रोध मत करो।" द्रोणाचार्य राजकुमारों से कहते हैं कि वे अगले दिन आकर उन्हें बताएँ कि उन्होंने क्या सीखा।

अधिकतर राजकुमार यह समझते हैं कि उन्हें इस सिखावनी को केवल कण्ठस्थ करना है और शब्दशः दोहरा देना है। अगले दिन वे सब ऐसा ही करते हैं — युधिष्ठिर के अलावा, जो केवल पहला वाक्य दोहराते हैं और कहते हैं, "मैं अभी दूसरा वाक्य सीख नहीं पाया हूँ।" वे एक सप्ताह तक हर दिन ऐसा कहते रहते हैं। अन्ततः द्रोणाचार्य उन्हें बुलाकर डाँटते हुए कहते हैं, "पूरा एक सप्ताह बीत गया और अभी तक तुम अपना पाठ नहीं सीख पाए!

अपने गुरु की फटकार पर युधिष्ठिर कुण्ठित या क्रोधित हुए बिना उत्तर देते हैं, "हे गुरुदेव, आपने कहा कि पूरा एक सप्ताह बीत गया, पर यदि मेरा पूरा जीवन भी बीत जाए तो भी मुझे नहीं लगता कि मैं यह पाठ ठीक से सीख पाऊँगा। मेरे विचार में पाठ सीखना केवल इतना ही नहीं है कि उसे दोहराते रहो ओर कहते रहो, "कभी क्रोध मत करो।" मेरे विचार से, इस पाठ को सीखना यानी वास्तव में कभी क्रोधित न होना, और मैं जब तक ऐसा बन नहीं जाता, मैं सचमुच यह नहीं कह सकता कि मैंने यह पाठ सीख लिया है।"

इस कहानी में, हम युधिष्ठिर के मननशील अध्ययन का प्रमाण देख सकते हैं। जिस सिखावनी को सीखने के लिए उनसे कहा गया था, उन्होंने उसके गहन अर्थ पर चिन्तन किया और "सीखने" के अर्थ पर भी मनन किया। उन्होंने शब्दों को मात्र नक़ल करके दोहराने से इन्कार कर दिया और उसके बजाय उन शब्दों को वास्तव में अपने अन्दर उतार लेने चुनाव किया। फटकार पड़ने पर भी उनका क्रोधित न होना यह दर्शाता है कि वे निश्चित ही सिखावनी को आत्मसात् कर रहे थे। गुरु द्रोणाचार्य यह स्वीकार कर लेते हैं कि युधिष्ठिर एक सच्चे विद्यार्थी हैं।

ये कुछ तरीक़े हैं, जिनके द्वारा एक सिद्धयोग विद्यार्थी होने के नाते आप, संकल्प के साथ 'आत्मसात् करने' का अभ्यास कर सकते हैं :

- वर्ष २०१६ के लिए श्री गुरुमाई के सन्देश को आत्मसात् करने हेतु, उन अन्तर-दृष्टियों पर मनन करें, जो आपने इस वर्ष अपने अध्ययन से प्राप्त की हैं। अपने आप से पूछें कि इन अन्तर-दृष्टियों को अपने हृदय में उतारने के लिए आप क्या कर सकते हैं।
- किसी सिद्धयोग अभ्यास को करने के बाद या किसी सिखावनी का अध्ययन करने के बाद कुछ समय के लिए शान्त बैठें और अन्तर से जो उभरकर आए उसे अपनी दैनन्दिनी में लिख लें।
- नियमित रूप से अपनी दैनन्दिनी पढ़ें और किस प्रकार आपकी समझ विकसित हो रही है, उस पर मनन करें।
- अपने अनुभवों को अधिक से अधिक स्पष्टता के साथ व्यक्त करने का अभ्यास करें जिससे आप उनके मर्म तक पहुँच सकें।
- किसी सिखावनी को अपने जीवन में उतारने के अपने अभ्यास पर मनन करें, यह देखने के लिए कि यह सिखावनी दैनिक जीवन में किस सीमा तक आपके सोचने और कार्य करने के तरीक़े का एक अभिन्न अंग बन चुकी है।

क़दम-दर-क़दम, आप अवश्य ही श्री गुरु की सिखावनियों को आत्मसात् करेंगे। सिखावनियों को अंगीकार करने के अपने दृढ़ संकल्प से आपके समर्पित और निरन्तर प्रयास, अवश्य ही समय आने पर उत्कृष्ट फल देंगे।

© २०१६ एस.वाय.डी.ए. फ़ाउण्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।